IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

"ज्ञानयोग की अवधारणा पर रामकृष्ण परमहंस के दृष्टिकोण का समालोचनात्मक अध्ययन"

Dr. Satender Dutt Amoli

(Associate Professor)

Department of Yogic Science

Sparsh Himalaya University, Dehradun (Formerly Himalayiya University) Uttarakhand.

Amit Dixit

(Research Scholar)

Department of Yogic Science

Sparsh Himalaya University, Dehradun (Formerly Himalayiya University) Uttarakhand

शोध सारांश : प्रकृति में मौजूद सभी जीवों में धर्म केवल मनुष्य के लिए है। मानव व्यक्तित्व को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है, विचार, भावना और इच्छा। तदनुसार भारतीय परंपरा में, यह माना जाता है, कि धार्मिक जीवन का लक्ष्य तीन मार्गों के अभ्यास के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है, जो मानव व्यक्तित्व के एक दूसरे पहलू को प्रस्तुत करते हैं। भारत में, जो साधक आध्यात्मिक जीवन को गंभीरता से लेते हैं, और ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग पर चलते हैं, उनसे इस मार्ग का अनुसरण करने की अपेक्षा की जाती है, जिसे ज्ञानयोग के रूप में जाना जाता है। ज्ञानयोग शब्द का मूल अर्थ आत्म साक्षात्कार है। वेदान्तिक जीवन में इसका अर्थ है, 'ब्रह्म साक्षात्कार'। आमतौर पर योग साधना के प्रमुख तीन मार्गों - ज्ञानयोग भक्तियोग, और कर्मयोग को एक दूसरे के अनन्य नहीं माना जाता, बल्कि ये तीनों मार्ग एक दूसरे के पूरक हैं। इन तीनों में ज्ञानयोग, योग जीवन का एक दर्शन है, जो मनुष्य की सक्रिय, चिंतनशील और संवेदनशील प्रकृति से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। रामकृष्ण परमहंस के दृष्टिकोण से, ज्ञानयोग केवल बौद्धिक समझ का विषय नहीं है, जैसा कि एक सामान्य विचार आधुनिक समाज में व्याप्त है। ज्ञानयोग हमारे सभी कर्तव्यों को ब्रह्म रूप में मान्यता देने के अलावा और कुछ नहीं है। ज्ञानयोग और कुछ नहीं बल्कि शुद्ध भावना है, जो जीव को ब्रह्म में विलीन कर जाती है। रामकृष्ण के अनुसार, ज्ञानयोग की प्रकृति भले ही निराकार ब्रह्म की जिज्ञासा से शुरू होती हो, किन्तु उसका अंत मन के किसी कोने में साकार ब्रह्म के रूप में तृप्ति से होती है।

कूट शब्द : ज्ञान, अज्ञान, विज्ञान, ज्ञानयोग

प्रस्तावना (आध्यात्मिक जीवन में ज्ञान का स्थान) :

रामकृष्ण ने आध्यात्मिक जीवन में जिस ज्ञान को आवश्यक तत्व माना है, वह आत्मा, जगत और ईश्वर की आध्यात्मिक प्रकृति की उचित अवधारणा से संबंधित है। यदि किसी व्यक्ति को सच्चा आध्यात्मिक जीवन जीना है, तो उसे उन आध्यात्मिक सिद्धांतों की सत्यता में दृढ़ विश्वास होना चाहिए, जो धार्मिक जीवन की संभावना और अंततः औचित्य के लिए आवश्यक हैं। रामकृष्ण के अनुसार सच्चा ज्ञान यह जानना है, कि क्या वास्तविक है? और क्या वास्तविक नहीं है? यह सत्-असत् का विचार ही विवेक ज्ञान है, जो आत्मसाक्षात्कार के लिए आवश्यक है। आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त जीव ज्ञानी है, लेकिन आत्मसाक्षात्कार की भी उच्चतर अवस्था विज्ञानी की है। इसलिए, आत्मबोध के इस दोनों चरणों की व्याख्या करना आवश्यक है। हम सबसे पहले ज्ञान की अवधारणा पर ध्यान केंद्रित करने का प्रयास करेंगे और फिर विज्ञान की अवधारणा पर आगे बढ़ेंगे। ज्ञानयोग के बारे में ध्यान देने वाली पहली बात यह है, कि इस ज्ञानयोग का अनुयायी ज्ञान और अज्ञान के बीच के अंतर को अच्छी तरह समझता है। और अज्ञान से मुक्त होने का प्रयास करता है।

ज्ञान और अज्ञान :

रामकृष्ण का मानना है, कि 'मैं और मुझ में' ही अज्ञान है, और सत्य ज्ञान के लिए विवेक आवश्यक है। विवेक को धारण करने से तुम्हें यह अनुभूति होगी कि जिसे तुम 'मैं' कहते हो, वह वास्तव में आत्मा के अतिरिक्त कुछ नहीं है। सत्य ज्ञान 'तू और मुझ में' है। 'तू और मुझ में' की अनुभूति ही ज्ञान का परिणाम है; 'मैं और मुझ में' अज्ञान से उत्पन्न होता है। ज्ञान से आत्म अनुभूति होती है।[1] मैं एक विद्वान हूँ, मैं एक ज्ञानी हूँ, 'मैं धनवान हूँ,', 'मैं सम्माननीय हूँ। मैं मालिक, पिता और शिक्षक हूँ - ये सभी विचार अज्ञान से पैदा हुए हैं। 'मैं यंत्र हूँ और आप यंत्री हैं' - यही ज्ञान है।[2] वह ब्रह्म ही है, जो विद्या और अविद्या दोनों बना है। जो अज्ञान की माया से भ्रमित रहते हैं। फिर, गुरु की सहायता से, वे ज्ञान की माया से मोक्ष के मार्ग पर अग्रसर हो जाते हैं। ब्रह्म गुणों और माया से परे हैं, ज्ञान की 'माया' और अज्ञान की माया दोनों से परे हैं। 'कामिनी और कांचन' अज्ञान की माया है। ज्ञान, त्याग, भक्ति और अन्य आध्यात्मिक गुण 'ज्ञान की माया' के वैभव हैं।[3] आचार्य शंकर के अनुसार, केवल ब्रह्म सत्य है; संसार मिथ्या है, यथा-

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्येत्येवंरूपो विनिश्चयः ।

सोऽयं नित्यानित्यवस्तुविवेकः समुदाहृतः ।।[4]

ज्ञान योग की प्रकृति :

रामकृष्ण ने ज्ञानयोग को इस तरह से परिभाषित किया, ज्ञानयोग "वह मार्ग है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति अपने स्वयं के वास्तविक स्वरूप को अनुभव कर सकता है। यह एक जागरूकता है, कि केवल ब्रह्म ही उसका वास्तविक स्वरूप है।"[5] ज्ञानयोग मूलतः विवेक और वैराग्य की तीव्र भावना के साथ गहन बौद्धिक विश्लेषण का एक अनुशासन है। ज्ञानयोग के आकांक्षी का उद्देश्य जगत के सभी पहलू को अवास्तविक मानकर तब तक अस्वीकार करना है जब तक वह उस बिंदु पर नहीं पहुंच जाता जहां वास्तविक और अवास्तविक के बीच सभी भेदभाव समाप्त हो जाते हैं, और समाधि में ब्रह्म का एहसास होता है। रामकृष्ण के अनुसार, ज्ञान के दो लक्षण हैं, पहला, अडिग बुद्धि। चाहे कितने भी दुःख, क्लेश, भय और बाधाएं क्यों न हों, व्यक्ति का मन नहीं बदलता... और दूसरा, पुरुषत्व - बहुत दृढ धैर्य। ज्ञानी की विशेषताओं की व्याख्या करते हुए, रामकृष्ण कहते हैं, एक ज्ञानी किसी को भी चोट नहीं पहुँचा सकता। वह एक पांच वर्ष के बच्चे के समान हो जाता है।[6]

ज्ञानयोग में शास्त्राध्यन का महत्व :

विवेक और वैराग्य विकसित करने के लिए, व्यक्ति को शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए। लेकिन एक निश्चित मनःस्थिति तक पहुँचने के बाद, अध्ययन को लम्बा करने की आवश्यकता नहीं है। शास्त्राध्यन का महत्व है, लेकिन जब व्यक्ति में विवेक की भावना विकसित हो जाती है, तो यह आवश्यक नहीं है। रामकृष्ण के अनुसार "जब तक कोई व्यक्ति ईश्वर के बारे में तर्क करता है, तब तक उसे ईश्वर का साक्षात्कार नहीं हुआ है।"[7] केवल तर्क किसी व्यक्ति को उसके लक्ष्य को प्राप्त करने में मदद नहीं करते हैं। तर्क का उपयोग वैराग्य की भावना विकसित करने के लिए किया जाना चाहिए। "यद्यपि आप जीवन भर तर्क करते रहते हैं, किन्तु तब तक, जब तक की आप समाधि में स्थित नहीं हो जाते, इसलिए सत्य और सत्य के बीच भेद करने के लिए तर्क करना आवश्यक है।"[8]

ज्ञान के लक्षण :

रामकृष्ण के अनुसार ज्ञानी न तो भगवान का रूप चाहता है, और न ही उसका अवतार। ज्ञानी का उद्देश्य अपने स्वयं के स्वरूप को जानना है। यह ज्ञान है, यही मुक्ति है।[9] आत्मज्ञान का वास्तविक स्वरूप यह है, कि यह ब्रह्म ही है मैं हूँ। ज्ञान प्राप्त करने के बाद भी, ज्ञानी अपना शरीर रखता है। लेकिन ज्ञान की यह अग्नि उसकी वासना और अन्य संस्कारों को जला कर भस्म कर देती है... एक ज्ञानी केवल ब्रह्म की चर्चा पसंद करता है। सांसारिक विषयों के बारे में बात करने पर उसे दुःख होता है, जब ज्ञानी का ज्ञान पाँचवीं भूमि पर पहुँच जाता है, तो वह ईश्वर के विषय के अलावा कुछ भी सुन या बोल नहीं सकता। उस अवस्था में उसके होठों से केवल ज्ञान के शब्द निकलते हैं।[10]

ज्ञान और अज्ञान से परे :

ज्ञान के दो लक्षण हैं। पहला अभिमान का अभाव, दूसरा शांत स्वभाव...जब मनुष्य की अंतरात्मा जागृत हो जाती है, जब वह ईश्वर के ज्ञान में सफल हो जाता है, तब उसे इन सब तर्कों को जानने की भी इच्छा नहीं होती। रामकृष्ण कहते हैं कि 'ज्ञान और अज्ञान के पार जाओ, तभी तुम ईश्वर को जान सकते हो।'[11] बहुत सी बातें जानना अज्ञान है। विद्वत्ता का अभिमान भी अज्ञान है। यह अटल विश्वास कि ईश्वर ही सब प्राणियों में निवास करता है, ज्ञान है। ईश्वर ज्ञान और अज्ञान दोनों से परे है। जिसके पास ज्ञान है, उसके पास अज्ञान भी है। रामकृष्ण का मानना है, कि जो प्रकाश के प्रति सचेत है, वह अंधकार के प्रति भी सचेत है। इसलिए ज्ञान और अज्ञान से परे जाओ। ईश्वर के अंतरंग ज्ञान के माध्यम से व्यक्ति उस अवस्था को प्राप्त करता है।[12]

पूर्ण ज्ञानी (विज्ञानी) की अवधारणा :

रामकृष्ण ने अपने दर्शन में विज्ञानी की अपनी एक अनूठी अवधारणा प्रस्तुत की। उनकी विज्ञानी की अवधारणा चेतना की एक परम अवस्था है। यह आत्म के ज्ञान के बाद की अवस्था है, जिसे ब्रह्मज्ञान कहा जाता है। ज्ञान की अवस्था में, साधक एकात्म चेतना प्राप्त कर लेता है। लेकिन विज्ञानी की अवस्था उससे भी आगे की अवस्था है, ब्रह्म का विशेष ज्ञान ही विज्ञान है।[13] रामकृष्ण के अनुसार "बहुत सी चीजों को जानना अज्ञान है। यह जानना कि ब्रह्म सभी प्राणियों में निवास करता है, ज्ञान है। और विज्ञान क्या है? यह ब्रह्म को एक विशेष तरीके से जानना, उसके साथ बातचीत करना और उसे अनुभव अपना करना...जैसे किसी ने दूध के बारे में नहीं सुना, तो वह अज्ञानी है। और किसी ने दूध को देखा है, और जाना है, तो वह ज्ञानी है। वहीं एक अन्य व्यक्ति जिसने दूध को देखा है, जाना है, और उसे पीकर पोषण भी प्राप्त किया है, वह विज्ञानी है।"[14] चेतना

की इस अवस्था को कैसे प्राप्त करें, रामकृष्ण कहते हैं, कि "विज्ञान की प्राप्ति के करने के लिए विद्यामाया की सहायता स्वीकार करनी होगी। तब ज्ञानयोगी वह निरपेक्ष से सापेक्ष और सापेक्ष से निरपेक्ष पर सहज ही जा सकता है। विज्ञानी हमेशा ब्रह्म का साक्षात्कार करता है। इसलिए वह संसार के प्रति इतना उदासीन रहता है। तब उसे पता चलता है, कि यह ब्रह्म ही है, जो यह सब (संसार) बन गया है।"

सन्दर्भ सूची :

---

[1] गुप्त, महेंद्रनाथ (2015), श्रीरामकृष्ण वचनामृत, खंड : 2, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृष्ठ : 1094

[2] गुप्त, महेंद्रनाथ (2015), श्रीरामकृष्ण वचनामृत, खंड : 1, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृष्ठ : 275

[3] गुप्त, महेंद्रनाथ (2015), श्रीरामकृष्ण वचनामृत, खंड : 1, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृष्ठ : 303

[4] विवेकचूड़ामणि : 20

[5] गुप्त, महेंद्रनाथ (2015), श्रीरामकृष्ण वचनामृत, खंड : 2, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृष्ठ : 732

[6] गुप्त, महेंद्रनाथ (2015), श्रीरामकृष्ण वचनामृत, खंड : 2, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृष्ठ : 972

[7] Chatterjee, Saits Chandra (1985), Classical Indian Philosophers - Their Synthesis in the Philosophy of Sri Ramakrishna, University of Kolkata, Kolkata, p: 322

[8] गुप्त, महेंद्रनाथ (2015), श्रीरामकृष्ण वचनामृत, खंड : 1, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृष्ठ : 365

[9] Chidbhavananda, Swami (1962) Ramakrishna Lives Ved¡nta, Tapovanam Publishing House, Tiruchirappalli, p: 166

[10] Bodhasarananda, Swami (2006) Teachings of Sri Ramakrishna,Trio Process, Kolkata, p: 231

[11] गुप्त, महेंद्रनाथ (2015), श्रीरामकृष्ण वचनामृत, खंड : 2, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृष्ठ : 756

[12] Dasgupta. R.K (2001) Sri Ramakrishna's Religion, The Ramakrishna Mission Institute of Culture, Kolkata, p: 193

[13] Dharmananda, Swami (2012), Living Traditions of Advaita Ved¡nta, The Heritage Publication, Banglore, p: 32

[14] गुप्त, महेंद्रनाथ (2015), श्रीरामकृष्ण वचनामृत, खंड : 1, रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृष्ठ : 246